दो शब्द

इस 'श्री जैनागम तत्त्व दीपिका' पुस्तक की प्रथमावृत्ति विक्रम संवत् १९९८ में प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक में प्रश्नोत्तर के रूप में जैनधर्म-सम्बन्धी अनेक विषयों का स्वरूप समझाया गया है। जो विषय प्रश्नोत्तर के रूप में समझाया जाता है वह रोचक हो जाता है और विद्यार्थियों को याद करने में बड़ी सुविधा होती है। अतएव यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई।

शास्त्रमर्मज्ञ पण्डितरत्न मुनि श्री पन्नालालजी महाराज सा० ने तथा पण्डित मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी म० सा० ने इस पुस्तक का आद्योपान्त सूक्ष्म निरीक्षण कर कुछ प्रश्नोत्तरों के विषय में संशोधन के लिए फरमाया।

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनागम तत्त्व दीपिका

पदारविन्दोन्थ मरन्दबन्धुभा-

गमन्दवृन्दारकवृन्दवन्दितम् ।

जिनं नमस्कृत्य जगज्जनावितं,

तनोमि जैनागमतत्त्वदीपिकाम् ॥ १ ॥

भावार्थ—चरण कमलों में सहर्ष सिर झुकाते हुए देवताओं से वन्दित तथा षट्कायरूप जगत् के रक्षक श्री जिन भगवान को नमस्कार कर मैं (घासीलाल मुनि) जैनागमतत्त्व दीपिका नामक ग्रन्थ रचता हूं ॥१॥

उ०-पांच हैं-१ श्रोत्रेन्द्रिय, २ चक्षुरिन्द्रिय, ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसनेन्द्रिय, ५ स्पर्शनेन्द्रिय।

२४ प्र०-एकेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उ०-जिसके सिर्फ एक स्पर्शन इन्द्रिय हो उसको एकेन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय।

२५ प्र०-त्रसजीव किसे कहते हैं ?

उ०-जो जीव त्रस नाम कर्म के उदय से चल फिर सकते हैं अर्थात् सर्दी गर्मी आदि दुःखों से अपने को बचाने के लिए गमनागमन कर सकते हैं उनको त्रस जीव कहते हैं।

२६ प्र.-त्रस के कितने भेद हैं ?

उ०- चार भेद हैं-द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय।

२७ प्र०-द्वीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प, भुजपरिसर्प, इनके भेद सन्नी (सज्ञी) और असन्नी (असंज्ञी) के भेद से दस, इन दसों के पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से बीस। इस प्रकार अड़तीस और बीस मिल जाने से तिर्यञ्च के अड़तालीस भेद हुए।

३८ प्र०- पृथ्वीकाय किसे कहते हैं ?

उ०- खान से निकलने वाली सब वस्तु अर्थात पृथ्वी ही जिसका शरीर हो, उसे पृथ्वीकाय कहते हैं। जैसे स्फटिक, मणि, रत्न, हिंगलु, हड़ताल, सोना, चांदी, तांबा लोहा, सीसा, मिट्टी, मुरड़, खड़िया, गेरू इत्यादि।

३९ प्र०- अप्काय किसे कहते हैं ?

उ०-अप् (जल) ही जिसका शरीर है, उसे अपकाय कहते हैं जैसे तालाब का पानी कुए का पानी, बावड़ी का पानी ओले ओस इत्यादि।

४० प्र०- तेउ (तेजस) काय किसे कहते हैं ?

नहीं, भेदने से भेदाय नहीं, अग्नि में जले नहीं, दूसरी वस्तु से रुके नहीं और दूसरी को रोके नहीं, छद्मस्थ की नजर आवे नहीं और केवली भगवान के ज्ञान गम्य हो, उसे सूक्ष्म कहते हैं।

४५ प्र०- बादर किसे कहते हैं ?

उ०- जो बादर नामकर्म के उदय से बादर शरीर में रहते हैं अर्थात् जो काटने से कट जाय, छेदने से छिद जाय भेदने से भिद जाय, अग्नि में जल जाय, छद्मस्थ के भी दृष्टिगोचर हों।

४६ प्र०- बादर के कितने भेद हैं ?

उ०- दो भेद–साधारण और प्रत्येक।

४७ प्र०- साधारण किसे कहते हैं ?

उ०- निगोद को साधारण कहते हैं।

४८ प्र० निगोद किसे कहते हैं ?

६०- प्र०- भवनपति के कितने भेद हैं ?

उ०- भवनपति के पचीस भेद हैं-१ असुरकुमार २ नागकुमार ३ सुवर्णकुमार ४ विद्युत्कुमार ५ अग्नि कुमार ६ द्वीपकुमार ७ उदधिकुमार ८ दिशाकुमार ९ वायुकुमार (पवनकुमार) १० स्तनित (स्तनित)कुमार। ये १० और पन्द्रह परमाधार्मिक * १ अम्ब २ अम्बरिषी ३ श्याम ४ शबल, ५ रौद्र, ६ महारौद्र, ७ काल, ८ महाकाल, ९ असिपत्र, १० धनुष, ११ कुम्भ, १२ वालुका, १३ वैतरणी, १४ खरस्वर और १५ महाघोष। सब मिलाकर भवनपतियों के २५ भेद हैं।

---

* १ अंब(अम्ब)- नारकों के जीवों को मार पीट करते हैं गिराते हैं और बांधकर आकाश में उछालते हैं। २ अम्बरिसी(अम्बरिषी)कतरनी से कतर कतर कर भूनने योग्य करते हैं। ३ साम

६२ प्र०- वाणव्यन्तर देवों के कितने भेद हैं ?

उ०- वाणव्यन्तर देवों के छब्बीस भेद हैं-१ पिशाच, २ भूत, ३ जख, (यक्ष), ४ राक्षस, ५ किन्नर, ६ किम्पुरुष, ७ महोरग, ८ गन्धर्व, ९ आणपन्नी, १० पाणपन्नी, ११ इसिवाई (ऋषिवादी), १२ भूयवाई (भूतवादी), १३ कन्दे, १४ महाकन्दे, १५ कुहंड (कूष्माण्ड), १६ पयगदेव (प्रेतदेव)। दस जृम्भक देवों के नाम १ अन्नजृम्भक २ पानजृम्भक ३ लयनजृम्भक ४ शयनजृम्भक ५ वस्त्रजृम्भक ६ फलजृम्भक ७ पुष्पजृम्भक ८ फलपुष्पजृम्भक ९ विद्युजृम्भक १० अग्निजृम्भक।

शाल्मलीवृक्ष पर चढ़ाकर चिल्लाते हुए नारकियों को खींचते हैं। १५ महाघोसे (महाघोष) डर के मारे भागते हुए नेरइयों को बाड़े में पशु के समान भयंकर शब्द करते हुए रोकते हैं। ये पन्द्रह जाति के देवता अतिकलुषित परिणामों होने से परमाधामिक परमअधामिक कहलाते हैं।

उ०-कल्पातीत-जो-कल्प अर्थात् जिनमें छोटे बड़ों का भेद न हो उन्हें कल्पातीत कहते हैं।

६८ प्र०-कल्पोपपन्न के कितने भेद हैं?

उ०-कल्पोपपन्न देवों के बारह भेद हैं-१ सौधर्म २ ईशान ३ सनत्कुमार ४ माहेन्द्र ५ ब्रह्मलोक ६ लान्तक ७ शुक्र ८ सहस्रार ९ आणत १० प्राणत ११ आरण १२ अच्युत।

६९ प्र०-तीन किल्विषिक कहाँ रहते हैं?

उ०-पहले दूसरे देवलोक के नीचे, तीसरे देवलोक के नीचे, छठे देवलोक के नीचे, तीन किल्विषिक रहते हैं। १ त्रिपल्योपमिक, २ त्रैसागरिक, ३ त्रयोदशसागरिक, ये उनके क्रमशः स्थिति के अनुसार नाम हैं।

७० प्र०-कल्पातीत कितने प्रकार के हैं?

उ०-कल्पातीत दो प्रकार के हैं-१ ग्रैवेयक और २ अनुत्तर वैमानिक।

हो, उसे काल द्रव्य कहते हैं अर्थात् जो नवीन को पुराना करे और पुराने को नष्ट करे। जैसे कैंची वस्त्र के स्वरूप को बदलने में सहकारी होती है।

१४३ प्र०- समय किसे कहते हैं ?

उ०- अत्यन्त सूक्ष्म, जिसका विभाग न हो सके, ऐसे काल को समय कहते हैं।

१४४ प्र०- आवलिका किसे कहते हैं ?

उ०- असंख्यात समय की आवलिका होती है।

१४५ प्र०- मुहूर्त किसे कहते हैं ?

उ०- एक करोड़, सड़सठ लाख, सतहत्तर हजार दो सौ सोलह (१६७७७२१६) आवलिका का एक मुहूर्त होता है ?

१४६ प्र०- अहोरात्र किसे कहते हैं।

उ०- तीस मुहूर्तों का एक अहोरात्र (एक दिन और एक रात्रि) होता है।

उ०-गृहस्थ के बालबच्चों को धात्री (धाय माता) की तरह खिला कर आहार लेना धात्री दोष है ।

३३१ प्र०- दूई (दूती) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- गृहस्थ का गुप्त या प्रकट संदेश उसके स्वजन आदि से कहकर आहार लेना दूती दोष है।

३३२ प्र०- निमित्त (निमित्त) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- गृहस्थ को निमित्त द्वारा लाभ अलाभ आदि बताकर आहार लेना निमित्त दोष है ।

३३३ प्र०- आजीवे (आजीवका) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- यह हमारी जाति है या कुल है, ऐसा कह कर आहार लेना आजीवे दोष है।

उ०- मैं अमुक धनवान हूँ, तुम्हें सरस आहार लाकर दूंगा, साधुओं से ऐसा कहकर आहार लाना मान दोष है।

३३८ प्र०- माये (माया-पिण्ड) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- छल कपट करके आहार लेना माया दोष है।

३३९ प्र०- लोहे (लोभ-पिण्ड) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- लोभ से अधिक आहार लेना लोभ दोष है।

३४० प्र०- पुव्विपच्छासंथव (पूर्वपश्चात्-संस्तव) दोष किसे कहते हैं ?

उ०- आहार लेने से पहले या पीछे दाता की प्रशंसा करके आहार लेना पुव्विपच्छासंथव दोष है।

३४१ प्र०- विज्जा (विद्यापिण्ड) दोष किसे

२ छेदोपस्थापनीय चारित्र, ३ परिहारविशुद्धि-चारित्र, ४ सूक्ष्मसम्पराय चारित्र ५ यथाख्यात चारित्र।

३६८ प्र०- अतिक्रम किसे कहते हैं ?

उ०- व्रत को उल्लंघन करने के संकल्प को अतिक्रम कहते हैं।

३६९ प्र०- व्यतिक्रम किसे कहते हैं ?

उ०- व्रत को उल्लंघन करने के लिए कायिक व्यापार को प्रारम्भ करना व्यतिक्रम कहलाता है।

३७० प्र०- अतिचार किसे कहते हैं ?

उ०- व्रत को भंग करने की सामग्री इकट्ठी करना तथा एक देश व्रत भंग करना अतिचार कहलाता है।

३७१ प्र०- अनाचार किसे कहते हैं ?

उ० व्रत को सर्वथा भंग करना अनाचार है।

सहायता न छोड़ना. ३ मनुष्य, तिर्यञ्च और देवता के उपसर्ग आने पर भी धर्म में दृढ़ रहना. ४ जिन धर्म में शंका कांक्षा विचिकित्सा न करना ५ जिनधर्मी में उपयोग सहित श्रद्धा करना, ६ जिन धर्म में हाड़ हाड़ की मिंजी रंगना. ७ मिथ्यादृष्टि के घर नहीं जाना. ८ दान देने के लिए सदा

---

९ लज्जालुता १० दयालुता ११ सौम्यदृष्टिपन (शान्त नज़र) १२ अमत्सरता (ईर्ष्या न करना) गुणानुरागिता १४ सत्यवादिपन १५ सुपक्षता (न्याय पक्ष का ग्रहण) १६ दीर्घदर्शिता (आगे पीछे का गहरा विचार करना) १७ विशेषज्ञता (प्रत्येक तत्त्व को बारीक दृष्टि से जानना) १८ वृद्धानुगमता (शिष्टों की परम्परा का पालन करना) १९ विनीतता (विनयवान होना) २० कृतज्ञता (दूसरों के किये हुए उपकार को न भूलना) २१ परहितकारिता (परोपकार करना)।